International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 6, June 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

भारतीय समाजशास्त्र के विकास मे इरावती कर्वे का योगदान

डॉ.हरिचरण मीना
व्याख्याता समाजशास्त्र विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सवाईमाधोपुर

शोध सारांश
भारतीय समाजशास्त्र के विकास मे अनेक समाजशास्त्रियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं। जिनमे इरावमी कर्वे भी एक हैं। इरावती कर्वे के मुख्य विचार भारत में हिन्दू समाज व उसकी जाति व्यवस्था के साथ साथ नातेदारी व्यवस्था पर भी केंद्रित थे। उन्होंने महाभारत के विषय में व्यापक रूप से लिखा, जिसमें उनका पात्र अध्ययन इस महाकाव्य के नायकों को ऐतिहासिक पात्रों के रूप में लेता है और उनकी भाव–भंगिमाओं एवं व्यवहार को उस काल को समझने के लिए प्रयोग करता है जिसमें वे रहते थे। इरावती कर्वे का अनुसंधान भारतीय जनसमुदाय की प्रजातीय संरचना, नातेदारी व्यवस्था, जाति की उत्पत्ति तथा ग्रामीण एवं शहरी समुदायों पर केंन्द्रित रहा हैं।

मुख्य शब्दः– हिन्दू समाज, महाभारत, प्रजातीय संरचना, नातेदारी व्यवस्था, जाति, परंपरागत प्रतिमान, वैश्विक दृष्टिकोण, सांस्कृतिक रूप, विविधता में एकात्मकता

प्रस्तावनाः–

भारतीय समाजशास्त्र के विकास मे अनेक समाजशास्त्रियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं। जिनमे इरावमी कर्वे भी एक हैं। इरावती कर्वे के मुख्य विचार भारत में हिन्दू समाज व उसकी जाति व्यवस्था के साथ साथ नातेदारी व्यवस्था पर भी केंद्रित थे।

उनके अनुसंधान सरोकार निम्नलिखित प्रकार से देखा जा सकता हैं।

- भारतीय जनसमुदाय का प्रजातीय संरचना
- भारत में नातेदारी व्यवस्था
- जाति की उत्पत्ति तथा
- ग्रामीण एवं शहरी समुदायों का समाजशास्त्रीय अध्ययन

हिन्दू समाज

हिन्दू सोसायटी – एन इंटरप्रिटेशन एक हिंदू समाज संबंधी अध्ययन है, जो कि कर्वे द्वारा अपनी अध्ययन यात्राओं के दौरान एकत्र किए गए आँकड़ों तथा हिंदी, मराठी, संस्कृत, पाली एवं प्राकृत भाषाओं में प्रासंगिक ग्रंथों के उनके अध्ययन पर आधारित है। इस पुस्तक में उन्होंने हिंदू धर्म में जाति व्यवस्था के पूर्व आर्य अस्तित्व पर चर्चा की और उसके विकास को उसके वर्तमान स्वरूप में खोजा।

इरावती कर्वे के अनुसार, ''भारतीय जाति समाज अर्ध– स्वतंत्र इकाइयों से मिलकर बना एक ऐसा समाज है जिसमें प्रत्येक इकाई व्यवहार का अपना ही कोई परंपरागत प्रतिमान दर्शाती है। इसके परिणामस्वरूप ही मानदंडों एवं व्यवहार की बहुलता उत्पन्न हुई है। तदनुसार, जाति में पाए जाने वाले विशिष्ट स्तरीकरण में हिंदू धर्म अंतर्निहित है''। कर्वे ने अपनी पुस्तक का आरंभ हिंदू समाज में पाए जाने वाले जटिल प्रतिमानों को ध्यान में रखते हुए ही किया। वह जाति को एक ऐसा अंतर्विवाही नातेदारी समूह कहती हैं जो किसी भी दूसरे समूह से भिन्न होता है कर्वे ने दर्शाया है कि जातियाँ वस्तुतः अपेक्षाकृत लघु सजातीय इकाइयों अथवा जातियों से मिलकर बने जाति समूह ही हैं। ऐसे किसी भी समूह में जातियों की संख्या भारत के विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न होती है।

जाति समाज के संरचनात्मक अभिलक्षणों पर चर्चा करते हुए कर्वे कहती हैं कि वह 'ढीला' और 'बहुत लोचदार' होता है। आंतरिक रूप से किसी भी जाति का अपना ही स्वतंत्रप्राय संगठन होता है प्रत्येक जाति अपने आप में व्यवहार्य होती है। मानकीकरण का अभाव एवं विविधता की अपार सहिष्णुता ही उनके विचार से हिंदू धर्म के वैश्विक दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति एवं परिणाम हैं जो कि अनेकता में एकता संबंधी उसकी मूल अवधारणा में नजर आते हैं।

जाति विषयक कर्वे के विचार मानवशास्त्रीय एवं रक्त समूह सर्वेक्षणों पर आधारित थे, जो कि उन्होंने जाति पर अपने अनुसंधान के दौरान किए थे। वह हिंदू समाज का संदर्भ अनेक अलग–अलग सांस्कृतिक इकाइयों के एक साथ निर्बंध आने के रूप में देती हैं। चितपावन ब्राह्मणों पर उनका शोध–प्रबंध दैहिक मानवशास्त्रीय अध्ययन (नेत्र वर्ण मापदंड) के साथ–साथ पुराणों एवं महाभारत व अन्य पौराणक कथाओं से उद्धृत जाति मूल संबंधी एक भारत–शास्त्र विषयक चर्चा पर भी आधारित था। वह भारतीय समाज को जातियों के एक ऐसी पैबंदकारी के रूप में देखती थीं जिसमें वे शारीरिक एवं सांस्कृतिक रूप से परस्पर भिन्न होती हैं।

कर्वे ने महाराष्ट्र पर समाजशास्त्र एवं मानवविज्ञान की वंशावली का संबंध रानाडे, तिलक व गोखले के सामाजिक लेखन से जोड़ा, जिसके बाद सेंट्रल प्रोविन्सिस में जनजातियों व जातियों पर रसेल एवं हीरालाल की कृतियाँ प्रकाशित हुई। नृजातीय विषयक उनकी कृतियों का सरोकार निम्नलिखित से माना जा सकता है. –

(प) शारीरिक नृविज्ञान एवं पुरातत्व मुख्यतः मानवशास्त्रीय अन्वेषणः –

(पप) सांस्कृतिक नृविज्ञान नातेदारी, जाति, ग्राम समुदाय एवं जनजातियाँ जो भारत–शास्त्र विषयक अध्ययन से युक्त हैं, यथा लोकगीत, महाकाव्य एवं मौखिक परंपराएँ

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 6, June 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

(पपप) सामाजिक–आर्थिक सर्वेक्षण– साप्ताहिक बाजार, बाँध विस्थापित, शहरीकरण, पशुचारक एवं स्थानिक संगठन

(पअ) समकालीन सामाजिक टिप्पणी – महिला, भाषा एवं प्रजाति।

कर्वे का विचार था कि भारत के समक्ष सांस्कृतिक समस्याएँ धर्म, जाति एवं परिवार के इर्द–गिर्द ही घूमती हैं। उन्होंने अनुभव किया कि कोई सर्वमान्य भाषा विकसित करना, समान नागरिक संहिता लागू करना और जाति व्यवस्था का उन्मूलन करना मुश्किल ही है। उन्होंने पाया कि एकरूपता के माध्यम से उपमहाद्वीप को जोड़ने का कार्य प्राचीन जीवनशैली के मूल्यवान सांस्कृतिक लक्षणों को नष्ट कर देगा। इन्हीं मूल्यवान लक्षणों को कर्वे द्वारा सहिष्णुता एवं विविधता के प्रति जागरूकता के रूप में वर्णित किया गया है।

भाषा और स्कूली शिक्षा जैसे समाज के मुद्दों पर कर्वे ने एक सशक्त मराठी राष्ट्रवाद मस्तिष्क में रखा और उन्होंने हिन्दी को किसी राष्ट्रभाषा के रूप में श्रेष्ठ दर्जा दिए जाने से अथवा लोक सेवाओं में पहुँचने के लिए अंग्रेजी भाषा को प्रधानता दिए जाने से को असहमति जताई। उन्होंने जोर देकर कहा कि सभी प्रकार की प्राथमिक शिक्षा किसी क्षेत्रीय भाषा में ही हो और कोई भी अंग्रेजी माध्यम का स्कूल न हो।

नातेदारी व्यवस्था

कर्वे की पुस्तक किनशिप ऑर्गेनाइजेशन इन इण्डिया (डेक्कन कॉलेज, 1953) भारत में विभिन्न सामाजिक संस्थाओं का अध्ययन प्रस्तुत करता है। उन्होंने निम्नलिखित विविधताओं को जुटाने के लिए भाषायी क्षेत्रों पर भारत में नातेदारी प्रतिमानों का मानचित्रण किया –

1. उत्तरी क्षेत्र में भारोपीय अथवा सांस्कृतिक व्यवस्था

2. दक्षिण क्षेत्र में द्रविड़ नातेदारी

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 6, June 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

3. मिश्रित प्रतिमानों का एक मध्य क्षेत्र (यथा, महाराष्ट्र में विद्यमान)

4. पूर्व में मुंडारी नातेदारी व्यवस्था।

उपर्युक्त में प्रत्येक भाषाई क्षेत्र के भीतर जातियों व उपजातियों के बीच भिन्नताएँ देखी जाती हैं। इस समस्त विविधता में एकात्मकता श्रुति साहित्य (वेद, ब्राह्मण और उपनिषद) तथा महाभारत एवं रामायण जैसे महाकाव्यों द्वारा विहित की गई, जिसे कर्वे प्राचीन उत्तर भारत में संयुक्त परिवार के समाजशास्त्रीय एवं मनोवैज्ञानिक अध्ययन को रूप में देखती हैं। उत्तर भारत की भारोपीय नातेदारी का विश्लेषण महाभारत में नातेदारी शब्दावली की व्युत्पत्तिक समीक्षा, संस्कृत एवं पाली ग्रंथों में निहित नातेदारी प्रथाओं के अवलोकन और विभिन्न भाषाओं में स्वजन हेतु समकालीन शब्दों के समरूप संग्रह के माध्यम से किया जाता है। भारत की इस समस्त नातेदारी व्यवस्था में मुस्लिम, ईसाई व अन्य समुदायों की नातेदारी प्रथाओं का कोई उल्लेख नहीं मिलता है।

कर्वे लिखती हैं कि उत्तर भारत में महिलाओं को अल्प आयु में ही उनके परिवार से अलग कर दूर कहीं अज्ञात ससुराल में रहने भेज दिया जाता है, जबकि दक्षिण भारत में युवतियाँ विवाहोपरांत भी अपने संबंधियों के बीच ही रहती हैं। मध्य भारत में नातेदारी व्यवस्था उत्तर भारत की अपेक्षा कहीं अधिक आंतरिक भिन्नता दर्शाती है, जहाँ कुछ जातियों में दक्षिण भारत की भाँति एक पक्ष में (ममेरे) भाई–बहनों के विवाह की अनुमति है। उत्तर भारत में, कर्वे (1953) के अनुसार, चचेरे/ममेरे/मौसेरे भाई–बहनों के बीच विवाह संबंध का निषेध लगभग सभी जातियों में है।

कर्वे के शब्दों में, 'संयुक्त परिवार एक ऐसे लोगों का समूह होता है जो एक ही छत के नीचे रहते हैं, एक ही चूल्हे पर पका खाना खाते हैं, समान रूप से संपत्तिधारक होते हैं, समान रूप से पूजा–अर्चना आदि करते हैं और किसी प्रकार की आत्मीयता से परस्पर जुड़े रहते हैं'। इस

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 6, June 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

प्रकार, कर्वे नातेदारी व्यवस्था संबंधी अपने शोध कार्य में हमें भारतीय समाज की संरचना और सामाजिक व्यवस्थाओं संबंधी उसकी सीमा का बोध कराती हैं।

ओबेरॉय ने कर्वे का वर्णन भारतीय परिवार पर एक स्वदेशी नारीवादी दृष्टिकोण रखने वाले अग्रदूत के रूप में किया है। उनके अनुसार, कर्वे ने पारिवारिक जीवन में आधुनिक परिवर्तनों का मूल्यांकन महिलाओं के जीवन पर उनके संभावित प्रभावों से भी किया। महिलाओं के प्रति उनकी सहानुभूति को वर्ष 1975 में भारतीय महिलाओं की अनुमानित प्रस्थिति पर उनके निबंध में देखा जा सकता है, जिसमें उन्होंने महिलाओं के रोजगार अथवा शिक्षा पर दीर्घावधिक रुझानों की समीक्षा की है।

वर्ष 1953 में प्रकाशित कर्वे का लेख दा किनिशप मैप ऑफ इण्डिया उत्तर भारत में विस्तारित विनिमय सिद्धांत के विपरीत दक्षिण भारत में निकट संबंधी से विवाह करने की प्रथा पर प्रकाश डालता है। इससे महिलाएँ बारंबार अपने माता–पिता के घर आ जा सकती हैं और विवाहित महिलाओं द्वारा झेला जा रहा तनाव कम किया जा सकता है।

सुंदर लिखते हैं कि ऐसा लगता है मानो कर्वे स्वयं को नारीवादी कहलाना पसंद नहीं करती हैं क्योंकि वह अपने विचारों में उग्र सुधारवादी नहीं लगतीं। उदाहरण के लिए, कर्वे संयुक्त परिवार प्रणाली का समर्थन अपनी सभी समस्याओं एवं आनंदानुभूतियों वाले जीवन के एक अनिवार्य अंग के रूप में करती हैं, जहाँ पितृसत्ता एवं उत्पीड़न विषयक प्रश्न ही नहीं उठते

जाति के विषय में कर्वे मुख्यतः दो प्रकरणों पर चर्चा करती हैं, यथा जाति की उत्पत्ति और विश्लेषण की इकाई तथा दूसरी बात यह कि लघुतम सजातीय इकाई अथवा जाति व्यावसायिक विविधीकरण के कारण किसी वृहत्तर समूह के टूट जाने से उत्पन्न एक उत्पाद थी। यहाँ कर्वे का मत घुर्ये से भिन्न है, जो कि यह दावा करते हैं कि भारत में जाति हिंद–आर्य संस्कृति का एक ऐसा ब्राह्मणवादी उत्पाद है जो भारत के अन्य भागों में विसरण से फैला। कर्वे ने दूसरी ओर, रक्त के नमूने, नेत्र–वर्ण आदि मानवशास्त्रीय प्रमाण एकत्र किए

Vol. 7 Issue 6, June 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

ताकि यह दावा किया जा सके कि यह चितपावन ब्राह्मण की भाँति उप जाति ही है जिसे स्वजाति मानकर व्यवहार किया जाना चाहिए, जबकि समग्र श्रेणी महाराष्ट्रीयन ब्राह्मण को एक जाति समूह मानकर ही चलना चाहिए। इसके लिए वह कारण यह मानती हैं कि चितपावन, कहरदास, सारस्वत, देशस्थ ऋग्वेदी और मध्यानदीन ब्राह्मण रोटी बेटी का व्यवहार नहीं करते, बल्कि उनके विवाह के नियम अलग हैं और वे जातीय रूप से परस्पर भिन्न होते हैं।

कर्वे के अनुसार जाति एक ऐसा समूह होती है जो सगोत्र विवाह की प्रथा अपनाता है अपने प्रसरण अथवा विसरण का एक विशिष्ट क्षेत्र रखता है (सामान्यतः एक भाषाई क्षेत्र के भीतर ही) एक अथवा एकाधिक परंपरागत व्यवसाय अपना सकता है, किसी पदानुक्रमित मापदंड पर अपनी न्यूनाधिक नियत अथवा लचर स्थिति दर्शा सकता है, तथा अन्य जातियों के प्रति व्यवहार की पारंपरिक रूप से परिभाषित रीतियाँ अपनाता है।

समाजशास्त्र में कर्वे ने सामाजिक–आर्थिक सर्वेक्षण अथवा नीति अध्ययन कार्यों के रूप अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनकी परवर्ती पुस्तकें मुख्यतः वर्णनात्मक हैं और उनमें तालिकाओं की भरमार है। उनका प्रथम सर्वेक्षण पश्चिम खानदेश की भील जाति पर था। इसमे उनका तर्क था कि जनजातीय लोग भारतीय जनसमुदाय के अन्य भागों से भिन्न नहीं है। और आदिमता के आधार पर एक पूरी तरह से नई इकाई बना देना गलत होगा। उनके विचार से जनजातीय लोगों की आगे बढ़ने और सम्मिलित हो जाने में मदद की जानी चाहिए तथा उन पर कोई भी बाहरी नियमावली नहीं थोपी जानी चाहिए।

कर्वे ने देखा कि नातेदारी व्यवस्था जाति व्यवस्था से प्रभावित और प्रबलित होती है और ये दोनों ही व्यवस्थाएँ विभिन्न भाषायी क्षेत्रों में पाए जाने वाले कुछ विशिष्ट प्रतिमानों के अनुरूप होती है। उनका कहना है कि हमें यह पता लगाना पड़ता है कि विचलन और विपथगमन के लिए किसी सामाजिक संरचना में कितनी सहनशीलता है। किसी सामजिक प्राधार की कठोरता

अथवा लोचता उस समाज विशेष की सामाजिक संरचना की प्रकृति पर अथवा समग्र सांस्कृतिक ताने–बाने पर निर्भर हो सकती है।

ब्राह्मणवादी धर्मशास्त्रों में विवाह विच्छेद को सहन नहीं किया जाता है और इसे धर्माचार्यो की सहमति प्राप्त नहीं होती। कर्वे लिखती हैं कि पूरे भारत में ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि शीर्षस्थ मानी जाने वाली कुछ जातियों को छोड़कर शेष सभी जातियों में विवाह विच्छेद एक दृढ़तः स्थापित सामाजिक व्यवस्था है। विवाह विच्छेद के अस्तित्व को स्वीकार करने से इंकार करने से नातेदारी एवं जाति व्यवस्थाओं पर दूरगामी प्रभाव पड़ते हैं। उन्होंने देखा कि कोई इस प्रकार का सामाजिक प्राधार भी हो सकता है जो विचलन के प्रति किसी अन्य सामाजिक प्राधार की अपेक्षा कहीं अधिक सहिष्णु हो । सांस्कृतिक संपर्क जैसे बाहरी कारक अनेक प्रकार के विचलन की ओर प्रवृत्त कर सकते हैं।

भारत के अधिकांश क्षेत्रों में परिवार अपने स्वयं का पालन करने वाली एक स्वायत्त इकाई होता है। अपने स्थान पर जाति भी एक संकुचित स्वायत्त इकाई ही है, जो कि अन्य समरूप इकाइयों के साथ कुछ सीमित संपर्क रखती है और जो कुछ मामलों में परिवारों के व्यवहार को नियंत्रित भी करती है। एक ही स्थान पर रहने वाली विभिन्न जातियाँ विवाह के संबंध में भिन्न–भिन्न नियमों का पालन करती हैं। भिन्न–भिन्न वंशानुगत व्यवसाय अपनाती हैं तथा भिन्न–भिन्न देवी–देवताओं को मानती हैं।

अतः परिवार और जाति को इस प्रकार के सामाजिक समूह कहा जा सकता है जिनमें रहने वाले व्यक्ति उस समूह से संबंधित होने के प्रति सचेत होते हैं। संयुक्त परिवार आर्थिक एवं सामाजिक सुरक्षा प्रदान करते रहे हैं। वह गाँव भी जहाँ लोग अपना पूरा जीवन बिताते थे, सभी निवासियों का अंतिम सहारा होता था। औद्योगिक शहरों के उदय एवं रोजगार के अवसरों के परिणामस्वरूप संयुक्त परिवार व ग्रामीण समुदाय के बंधन अब ढीले पड़ गए हैं।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 6, June 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

युगांत

इरावती कर्वे का युगांत नामक महाकाव्य महाभारत के पुनर्लेखन के रूप में एक ऐसा साहित्यिक एवं समाजशास्त्रीय ग्रंथ है जो प्राचीनकाल के इतिहास, संस्कृति एवं दर्शन का सम्मिश्रण प्रस्तुत करता है। यह पुस्तक एक साहित्यिक कृति के रूप में, एक समाजशास्त्रीय अध्ययन के रूप में और एक नृजातीय एवं सांस्कृतिक दस्तावेज के रूप में उल्लेखनीय है तथा एक मानवीय आवश्यकताओं एवं प्रतिक्रियाओं को प्रतिबिंबित करने वाले दर्पण के रूप में कार्य करती है, जो कि अतीत एवं वर्तमान काल दोनों में एक समान होते हैं।

इरावती कर्वे का कहना है कि महाभारत के मुख्य पात्र न तो पूर्णतः भले हैं और न ही पूर्णतः बुरे, अपितु वे दोनों का मिश्रण हैं। वह प्रत्येक पात्र की समीक्षा करती हैं और मानवीय भावनाओं (सकारात्मक और नकारात्मक दोनों) की एक विस्तृत शृंखला की कारगुजारी को सुलझाती हैं। अपनी प्रस्तुति में वह पात्रों के गुण–दोषों पर टीका–टिप्पणी किए बिना एक तथ्यात्मक स्वर अपनाती हैं। वह इस साहित्यिक ग्रंथ और समाज का सांस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं सभ्यतागत पहलुओं का समानांतर अध्ययन प्रस्तुत करती हैं।

काव्य घुमन्तु लोकगायकों द्वारा मौखिक रूप से गाया जाता था, जिन्हें सूत कहा जाता था। वर्णन विधि का उल्लेख करते हुए कर्वे उसकी संरचना को बाह्य एवं आंतरिक रूप से निकलकर आती कथा के अंदर से कथा के रूप में देखती है। मुख्य कथा का सूत्र कभी नहीं भुलाया जाता है। महाभारत की कथा में अनेक सूत्रधार हैं और 18–दिवसीय युद्ध की घटनाओं का वर्णन सूत कथावाचक संजय द्वारा धृतराष्ट्र के समक्ष किया गया है।

विभिन्न सूतों के भिन्न–भिन्न संस्करणों से लेकर काव्य को एक सुसंगत पाठ के रूप में ढाल दिया गया। महाकाव्य महाभारत ने अपना आकर्षण भारत में विभिन्न संप्रदायों के बीच बिखेरा बौद्धों के लिए इसकी उत्कृट आचार संहिता और जैनियों एवं मराठियों के लिए की कथा कृष्ण जबकि भगवद् गीता भारत के भीतर व बाहर दोनों जगह सर्वाधिक पढ़ी जाने वाली पुस्तक है।

यह कथा आदिवासियों के बीच भी लोकप्रिय हुई, जिन्होंने भीम में लोक–साहित्य के शक्तिशाली पुरुष का आदिरूप देखा। इस प्रकार महाभारत की अपने पाठक वर्ग के लिए भिन्न–भिन्न कोटि में सार्थकता एवं प्रासंगिकता देखी जाती है।

एक समाजशास्त्री के रूप में इरावर्ती कर्वे का मानना है कि आज की पीढ़ी में इस उत्कृष्ट महाकाव्य की जानकारी का अभाव है और इसीलिए वह इस कथा को पुनः सुनाती हैं। ताकि युवा पीढ़ी को यह ज्ञान हो सके कि उनकी समस्याएँ वही हैं सामना महाकाव्य के पात्रों द्वारा किया गया। इसमें ऐसे मुद्दों को उठाया गया है जो अनिवार्यतः मानवीय हैं। इसका प्रतिपाद्य विषय एक जानी–मानी कथा ही है, यथा संपत्ति को लेकर विवाद। यहाँ विवाद हस्तिनापुर के सिंहासन के लिए कौरवों और पांडव राजकुमारों, यथा धृतराष्ट्र और पांडु के पुत्रों के बीच है।

इरावती महाभारत के विभिन्न पात्रों व उनके कार्यों को किसी नैतिकता के चश्मे से व्यक्तिनिष्ठ रूप में नहीं, बल्कि निष्पक्ष रूप में उन घटनाओं के माध्यम से प्रस्तुत करती हैं जिन्होंने विभिन्न लोगों की नियति को प्रभावित एवं निर्धारित किया। तदनुसार, उक्त पात्र अच्छाई व बुराई के अपरिभाषित क्षेत्र में ही रहते हैं और उनके कार्यों का दुखद अंत होता है। इरावर्ती कर्वे की द महाभारत ''अच्छे होने की कठिनाई'' का वर्णन करती है। भीष्म का समस्त जीवन एक निष्फल बलिदान सिद्ध हुआ । कर्वे कहती हैं, ''राजनीति के क्षेत्र में उनके कार्य भले ही न्यायसंगत हों, परंतु मानवीय दृष्टिकोण से वे निश्चय ही दोषपूर्ण हैं।'' वह उनके अनेक कार्यों के औचित्य पर सवाल उठाती हैं। महाभारत के प्रति इरावती का दृष्टिकोण सम्मान, बलिदान, अपनी ही भलाई आत्म–केंद्रित व्यसन आदि मूल्यों के अंधानुकरण से काफी दूर है। उनका कथावाचन व्यक्ति की दृष्टि से परे मानवतावादी दृष्टि के इर्द–गिर्द घूमता है, जो कि प्रायः साथियों पर विनाशकारी प्रभाव के रूप में परिणत होता है। इसी प्रकार, युधिष्ठिर द्वारा निष्ठापूर्वक धर्म का पालन व द्युत क्रीड़ा हेतु उसकी मानसिक दुर्बलता तथा कर्ण की उदारता मानव क्षमता की भारी बर्बादी के साथ एक त्रासदी में ही परिणत होते हैं।

पुनश्च एक समाजशास्त्री के रूप में इरावती कर्वे ने मानवीय सामाजिक व्यवहार का अध्ययन किया तथा एक मानवशास्त्री के रूप में उन्होंने मनुष्यों के शारीरिक, सामाजिक एवं विकास का एक कुशाग्र अध्ययन प्रस्तुत किया।

सारांश

इस अध्ययन में हमने इरावती कर्वे के जीवन एवं कृतियों के विषय एवं भारतीय समाज''ाास्त्र के विकास मे योगदान का वि''लेषण किया हैं। हमने उस सामाजिक एवं शैक्षणिक परिवेश की समझ विकसित करने के साथ शुरुआत की जिसमें उनकी अवधारणाओं ने जन्म लिया। तदोपरांत हमने उनकी मुख्य अवधारणाओं पर अध्ययन मे विम''ा किया हैं। हमने अध्ययन मे देखा हैं कि कर्वे ने भारत–शास्त्र में अपनी विशेषज्ञता के साथ मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण को एकीकृत किया। यही बात उनके कार्य को दूसरों के कार्य से भिन्न दर्शाती है। उनका अध्ययन उस समय के समाज की समग्र एवं गहन समझ को प्रस्तुत करता हैं ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. इग्नू भारतीय समाज''ाास्त्रीए परम्पराएं 2015,

2. इरावती कर्वे, किनशिप ऑर्गेनाइजेशन इन इंडिया, डेक्कन कॉलेज मानोग्राफ सीरीज–11, पूना : डेक्कन कॉलेज पोस्ट–ग्रेजुएट एंड रिसर्च इंस्टिट्यूट 1953

3. इरावती कर्वे, हिंदू सोसाइटी एन इंटरप्रिटेशन, पूना डेक्कन कॉलेजं 1961

4. इरावती कर्वे, महाराष्ट्र : लैंड एंड इट्स पीपल, राजकीय मुद्रण निदेशालय, स्टेशनरी एवं प्रकाशन, महाराष्ट्र राज्य 1968

5. इरावती कर्वे, युगांतः द एंड ऑफ एन ईपक, पूना देशमुख प्रकाशन 1969